बड़ों की मायें

माइल ख़ैराबादी

विषय-सूची

कुछ अल्फ़ाज़ का मतलब

इस किताब में कुछ ऐसे अल्फ़ाज़ आयेंगे, जिनको मुख़्तसर शक्ल में लिखा गया है। किताब पढ़ने से पहले ज़रूरी है कि उन अल्फ़ाज़ की मुकम्मल शक्ल और मतलब समझ लिया जाये, ताकि किताब पढ़ते वक़्त कोई परेशानी न हो। ऐसे अल्फ़ाज़ ये हैं :

अलैहि० : इस की मुकम्मल शक्ल है, **'अलैहिस्सलाम'**, यानी 'उन पर सलामती हो !' नबियों और फ़रिश्तों के नाम के साथ इज़्ज़त और मुहब्बत के लिए ये अल्फ़ाज़ बढ़ा देते हैं।

रज़ि० : इस की मुकम्मल शक्ल है, **'रज़ियल्लाहु अन्हु'**, इस के मायने हैं अल्लाह उन से राज़ी हो !' **'सहाबी'** के नाम के साथ यह इज़्ज़त और मुहब्बत की दुआ बढ़ा देते हैं।

सहाबी उस ख़ुशक़िस्मत मुसलमान को कहते हैं, जिसे नबी सल्ल० से मुलाक़ात का मौक़ा मिला हो। **सहाबी** की जमा (बहुवचन) **सहाबा** है और मुअन्नस (स्त्रीलिंग) **सहाबियः** है।

रज़ि० अगर सहाबिया के नाम के साथ इस्तेमाल हुआ हो तो **रज़ियल्लाहु अन्हा** पढ़ते हैं और अगर **सहाबा** के लिए इस्तेमाल हुआ हो तो **रज़ियल्लाहु अन्हुम** कहते हैं।

सल्ल० : इस की मुकम्मल शक्ल है, **'सल-लल-लाहु अलैहि व सल्लम'** इसका मतलब है, 'अल्लाह उन पर रहमत और सलामती की बारिश करे !' हज़रत मुहम्मद सल्ल० का नाम लिखते, लेते या सुनते हैं तो इज़्ज़त और मुहब्बत के लिए यह दुआ बढ़ा देते हैं।

बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्रहीम

(शुरू अल्लाह के नाम से जो बड़ा रहमान व रहीम है)

हज़रत सुलेमान की माँ

बेटे को नसीहत

प्यारे नबी सल्ल० ने फ़रमाया कि हज़रत सुलेमान अलैहिस्सलाम की माँ ने उन को नसीहत की कि बेटा रात भर न सोया करो। रात का ज़्यादा हिस्सा नींद में गुज़ार देना, क़ियामत के दिन इन्सान को अच्छे कामों से मुहताज बना देता है। (हदीस)

हज़रत सुलेमान अलैहिस्सलाम ने अपनी माँ की इस नसीहत को गांठ में बांध लिया। फिर कभी पूरी रात नहीं सोये। आप रात का एक हिस्सा अल्लाह की याद में गुज़ारते थे।

बड़े हो गए तो अल्लाह ने हज़रत सुलेमान को अपना नबी बनाया और बादशाहत भी दी। अल्लाह ने जिन्नात और हवा को भी आप का ताबेदार बना दिया। आप जानवरों की बातें भी समझ लेते थ। यह सब अल्लाह का फ़ज़्ल था। वह जिसे जो चाहे दे।

हज़रत ज़ुबैर की माँ

माँ की सख़्ती

हज़रत ज़ुबैर रज़ियल्लाहु अन्हु, प्यारे रसूल सल्ल० के प्यारे साथी थे। और उन दस सहाबा में से थे जिनको हुज़ूर सल्ल० ने जन्नती गिनाया। ऐसे बड़े सहाबी की माँ ने उन को कैसे पाला? यह बड़ी मज़ेदार और दिलचस्प बात है। पढ़ो और सबक़ हासिल करो कि अगर हमारी अम्मीजान या घर ख़ानदान का कोई दूसरा बड़ा बुज़ुर्ग हमारी भलाई और हमें सुधारने के लिए कुछ सख़्ती करे तो बुरा नहीं मानना चाहिए।

हज़रत ज़ुबैर रज़ि० छोटे ही थे कि आप के बाप का इन्तिक़ाल हो गया। उन की माँ हज़रत सफ़ीया रज़ि० ने ही उन को पाला पोसा। वह बेटे से बड़े मुश्किल-मुश्किल काम करवातीं। लोग एक बच्चे को भारी-भारी काम करते देखते तो उन की मां से कहते, "अरे क्या बच्चे को मार डालोगी?" वह जवाब देतीं, "मैं इस को निडर, बहादुर और समझदार बनाना चाहती हूं।"

अल्लाह को भी ऐसा ही करना था, हुआ भी ऐसा ही। हज़रत ज़ुबैर बड़े हुए तो बड़े बहादुर निकले। अभी १६-१७ साल के ही थे कि एक अखाड़े में बहुत बड़े पहलवान से कुश्ती हो गयी। लोगों ने मना किया कि उस पहलवान से न लड़ें। लेकिन ज़ुबैर रज़ि० बिलकुल न डरे। अखाड़े में उतरे और ऐसा दाव मारा कि पहलवान धड़ाम से गिर गया और हाथ अलग टूटा। लोग उस पहलवान को लाद कर हज़रत सफ़ीया के पास ले गए तो उन्होंने पूछा, "सच कहो, तुमने मेरे बच्चे को कैसा पाया, बहादुर या डरपोक?"

एक बार काफ़िरों ने मुसलमानों को जंग के लिए मजबूर कर दिया। मुसलमान रसूलुल्लाह के साथ मैदान में उतरे। हज़रत ज़ुबैर भी आप के साथ थे। उस ज़माने के रिवाज के मुताबिक़ बाक़ायदा जंग से पहले एक काफ़िर पहलवान ने मुसलमानों को ललकारा और एक टीले पर चढ़कर पुकारा, "कौन मुसलमान मुझ से लड़ सकता है?" हज़रत ज़ुबैर आगे बढ़े और उस पहलवान से लिपट गए। दोनों गिर पड़े और लुढ़कते हुए नीचे चले। हज़रत सफ़ीया रज़ि० भी उस समय मौजूद थीं और प्यारे नबी सल्ल० के पास खड़ी देख रही थीं। घबरा कर बोलीं, "या रसूलल्लाह मेरा बच्चा।" आप ने फ़रमाया "घबराओ नहीं, ज़ुबैर इस पहलवान को मार देगा।"

भला प्यारे रसूल सल्ल० की बात कभी ग़लत हुई है? अतः ऐसा ही हुआ। हज़रत ज़ुबैर ने उस पहलवान को दबा लिया और उस को क़त्ल कर दिया।

हज़रत सफ़ीया ख़ुद बड़ी बहादुर थीं। वह बड़े-बड़े पहलवानों का कामयाबी से मुक़ाबला करती थीं और उन को भगा देती थीं। ख़न्दक़ की लड़ाई में एक दुश्मन पहलवान को उन्होंने पकड़ कर क़त्ल कर डाला और उस का सर काट कर दुश्मनों की तरफ़ फेंक दिया, जिस से दुश्मन डर गए।

हज़रत सफ़ीया प्यारे रसूल सल्ल० की सगी फूफी थीं। अल्लाह उन से राज़ी हो।

हज़रत अब्दुल्लाह की माँ

हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० अपने जमाने के माने हुए बहादुर पहलवान थे। प्यारे नबी सल्ल० ने जब उन से बैअ़त

(इस्लाम और अल्लाह के रसूल से वफ़ादारी का वादा) ली तो आप की उम्र केवल सात साल थी। उन की माँ का नाम हज़रत असमा रज़ि० था जो हज़रत अबूबक्र की बेटी और हज़रत ज़ुबैर की बीवी थीं। वह बहुत समझदार और बहादुर औरत थीं। वह ऐसी समझदार थीं कि नबी सल्ल० भी आप से मशिवरा लेते थे। जब नबी सल्ल० मक्का से मदीना हिजरत फ़रमा रहे थे तो आप के लिए रास्ते का सारा इन्तेज़ाम असमा ने ही किया। और जब हुज़ूर सल्ल० सौर की गुफा में छुप कर रहे थे तो तीन दिन तक आप को खाना पहुंचाया और सारी ख़बर दीं, लेकिन मक्के वाले जान न सके।

इस बुज़ुर्ग ख़ातून ने अपने बेटे को किस तरह पाला? उस का अन्दाज़ा नीचे की बातों से हो जायेगा। वैसे अगर हज़रत असमा का पूरा हाल लिखा जाए तो बड़ी किताब बन जाएगी।

जब हुज़ूर सल्ल० हिजरत करके मदीना तशरीफ़ ले गए तो हज़रत असमा भी वहीं बुला ली गयीं। जब मुसलमान मदीना पहुंचे तो वहां की आब व हवा उन को रास न आयी। कई साल हो गए कि किसी मुसलमान औरत के यहां कोई औलाद न हुई। काफ़िरों ने मशहूर कर दिया कि हमारे देवता उनसे नाराज़ हो गए हैं, अतः अब मुसलमानों के यहां कोई औलाद न होगी। अगरचे मुसलमानों को इन बातों पर बिल्कुल यक़ीन न था लेकिन वह इस बात से काफ़ी दुखी थे, और दुआ करते थे कि अल्लाह इन काफ़िरों के झूठ का भांडा फोड़ दे।

हज़रत असमा भी मदीना आ चुकी थीं। मुसलमानों में पहला बच्चा उन के यहां हुआ, जिस का नाम अब्दुल्लाह रखा गया।

मुसलमानों ने हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ि० की पैदाइश पर बड़ी खुशी मनाई। हज़रत असमा बच्चे को लेकर हज़रत मुहम्मद सल्ल० के पास पहुंचीं। आप भी बच्चे को देखकर ख़ुश हुए। आप ने हज़रत अब्दुल्लाह को गोद में लिया, घुट्टी पिलाई और दुआ दी।

हज़रत असमा रज़ि० हज़रत अब्दुल्लाह को बचपन से ही निडर बना रही थीं। जब आप चार-पांच साल के ही थे कि काफ़िरों ने मदीना पर चढ़ाई कर दी। मुसलमानों ने हिफ़ाज़त के लिए नगर के चारों तरफ़ खाई खोद ली। दुश्मनों से घमासान की लड़ाई हुई। इस लड़ाई को ख़न्दक़ की जंग कहते हैं। हज़रत असमा मासूम बच्चे को लड़ाई का तमाशा देखने भेज देतीं। उन को दूर एक टीले पर बिठा देतीं और हज़रत अब्दुल्लाह दिन भर तीरों व तलवारों की लड़ाई देखते रहते।

बड़े होकर यही अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर ऐसे बहादुर बने कि उन के मुक़ाबले का कोई दूसरा बहादुर न था। फिर हज़रत असमा उन को जोश दिलाया करती थीं।

बड़े होकर हज़रत अब्दुल्लाह सेना के कमांडर बने। एक बार उनको थोड़े से सैनिकों के साथ एक बहुत बड़ी फ़ौज का मुक़ाबला करना पड़ा। इस मौक़े पर जब उन्होंने अपनी मां हज़रत असमा रज़ि० से मशविरा किया तो उन्होंने यह कह कर जोश दिलाया :

"बेटा तुम अपनी बात अच्छी तरह समझते हो। अगर तुम अल्लाह के लिए लड़ रहे हो और सच्चाई के तरफ़दार हो तो तुम को डट कर मुक़ाबला करना चाहिए। जाओ और मर्दों की तरह लड़ो। जान का ख़ौफ़ न करो। इज़्ज़त के साथ

तलवार का जख़्म खाना, बदनामी के सुख से हज़ार गुना अच्छा है। अगर तुम शहीद हो गए तो मुझे ख़ुशी होगी और अगर तुम दुनिया की धन-दौलत चाहते हो, और उस के लिए लड़ रहे हो तो तुम से बुरा कौन होगा? तुम कब तक ज़िन्दा रहोगे। आख़िर एक दिन मरना ही है। इसलिए अच्छा यह है कि नेकी के तरफ़दार हो कर जान दो।"

हज़रत असमा बहुत दिनों ज़िन्दा रहीं वह बहुत बूढ़ी हो गईं थीं। लेकिन दम-ख़म वही थे। उस वक़्त एक ज़ालिम हुक्मरां हज्जाज बिन यूसुफ़ हुआ है। लेकिन हज़रत असमा उस से भी नहीं डरती थीं, और एक बार उस को ऐसा डांटा कि लोग हैरत में पड़ गये। किसी बात पर नाराज़ हो कर उस के मुंह पर ही कहा, "मैंने नबी सल्ल० से सुना है कि क़बीला सिक़ीफ़ में दो आदमी ज़ालिम पैदा होंगे जिन में से पहला दूसरे से बदतर होगा। तो एक झूठा (मुख़तार सक़फ़ी) तो मैं देख चुकी हूं और दूसरा ज़ालिम तू है।"

हज़रत अनस बिन मालिक की माँ

हज़रत अनस (रज़ियल्लाह अन्हु) प्यारे रसूल सल्ल० के मशहूर सहाबी हैं। वह बचपन से ही रसूलुल्लाह के पास रहने लगे थे। वह बड़े फ़रमांबरदार थे। हर वक़्त हुज़ूर का काम करने और बातें सुनने के लिए तैयार रहते थे। हुज़ूर सल्ल० ने इन्हीं अनस से वह मज़ेदार मज़ाक़ किया था जो "दो कान वाले" के नाम से मशहूर है। हुज़ूर ने उन को एक बार "दो कान वाले" कह कर पुकारा था, जिस का मतलब है "फ़रमांबरदार" और मज़े की बात यह है कि इन्सान के दो कान तो होते ही हैं।

हज़रत अनस रज़ि० की माँ का नाम "उम्मे सुलेम रज़ि०" था वह बड़ी मशहूर हुईं। उन्होंने बड़े-बड़े कारनामे किए हैं और इस्लाम की बड़ी ख़िदमत की है। हज़रत अनस फ़रमाया करते थे कि मेरी मां का मुझ पर सब से बड़ा एहसान तो यह है कि उन्होंने मुझे रसूलुल्लाह की ख़िदमत के लिए दे दिया था और इस तरह मुझे एक अच्छा इन्सान बन जाने का मौक़ा मिला।

हज़रत उम्मे सुलेम मदीना की रहने वाली थीं। उन के शौहर का नाम मालिक था। हज़रत उम्मे सुलेम तो मुसलमान हो गयीं, लेकिन उनके शौहर मालिक ने इस्लाम क़ुबूल नहीं किया। यही मालिक हज़रत अनस के बाप थे।

हज़रत अनस अभी बच्चे ही थे कि माँ ने उन को कलिमा सिखाना शुरू कर दिया। इस पर उनके बाप मालिक ने हज़रत उम्मे सुलेम से नाराज़ होते हुए कहा, "एक तो तुम ने ख़ुद अपने बाप-दादा का दीन छोड़ दिया, अब चाहती हो कि यह बच्चा भी बेदीन हो जाए।" हज़रत उम्मे सुलेम रज़ि० ने जवाब दिया, "यह तो भोलाभाला नादान बच्चा है। मैं तो यह चाहती हूँ कि तुम भी मुसलमान हो जाओ।"

मालिक मुसलमान न हुए और एक सफ़र के दौरान किसी ने उनको मार डाला। और उम्मे सुलेम बेवा हो गयीं। क्योंकि वह बड़ी समझदार, सेहतमन्द और बहादुर औरत थीं, इसलिए बहुत से लोगों ने शादी का पैग़ाम दिया। लेकिन उन्होंने यह कह कर इन्कार कर दिया कि मेरा बच्चा अभी बहुत कम उम्र है।

जब हुज़ूर सल्ल० हिजरत करके मक्का से मदीना पहुंच गए तो उस वक़्त हज़रत अनस की उम्र सिर्फ़ दस साल थी। हज़रत उम्मे

सुलेम अपने बेटे को एक बेहतरीन इन्सान बनाना चाहती थीं। उन्होंने सोचा एक अच्छा इन्सान बनने के लिए हुज़ूर सल्ल० की ख़िदमत में रहने से बढ़कर और क्या मौक़ा हो सकता है। इसलिए वह हज़रत अनस को लेकर हुज़ूर की ख़िदमत में हाज़िर हुयीं और अर्ज़ किया, "या रसूलल्लाह में बेवा हूँ, मैंने इस बच्चे को बड़ी मेहनत से पाला है। मैं चाहती हूँ कि यह एक बेहतरीन इन्सान बने। इसलिए मेरी ख़्वाहिश है कि आप इस को अपनी ख़िदमत में रख लें। नबी करीम सल्ल० ने यह बात क़बूल कर ली। हज़रत अनस हुज़ूर की ख़िदमत में रहने लगे। दीन की बातें सीखने लगे। आप रसूलुल्लाह को जो काम जिस तरह करते हुए देखते ख़ुद भी वैसे ही करते। और नबी सल्ल० की पैरवी करते और फिर हज़रत अनस पर अल्लाह का ऐसा फ़ज़्ल हुआ कि वह हुज़ूर सल्ल० के बड़े सहाबियों में गिने जाने लगे। उन्होंने बहुत सी हदीसें बयान की हैं, जिन को मुसलमान पढ़ते हैं और इस्लाम का इल्म सीखते हैं।

हज़रत अनस रजि.० इक़रार करते हैं कि अगर मेरी मां उम्मे सुलेम मेरे लिए यह इन्तेज़ाम न करतीं तो मैं बड़े घाटे में रहता।

इमाम रबीआ की माँ

इमाम रबीआ एक बहुत बड़े इमाम और अपने वक़्त के सब से बड़े आलिम थे। वह मस्जिद-ए-नबवी में दर्स दिया करते थे। उनके दर्स में बड़े-बड़े आलिम शरीक हुआ करते थे। और छोटे व बड़े सब उनकी इज़्ज़त करते थे। वह इतने बड़े इमाम बन गए, इस में उन की मां का बड़ा हाथ था।

अल्लाह के फ़ज़्ल से उनको ऐसी मां मिली थीं जिनकी ख़्वाहिश थी कि उनका बेटा बड़ा आलिम और दीन का इल्म फैलाने वाला बने।

उन्होंने बेटे की तालीम पर तीस हज़ार अशर्फ़ियां ख़र्च कीं। अल्लाह ने इमाम रबीआ को बड़ी अच्छी समझ दी थी और उन्होंने बड़ी मेहनत से पढ़ा। उनके बचपन का क़िस्सा बड़ा मज़ेदार है। सुनिये–

इमाम साहब के बाप का नाम फ़र्रुख़ था। वह एक फ़ैजी थे। इमाम रबीआ की पैदाइश से कुछ दिन पहले वह लम्बी मुद्दत के लिए जंग पर चले गये, उन को २७ साल तक घर वापसी का मौक़ा नहीं मिला। इस वक़्त में इमाम रबीआ ख़ूब पढ़ लिखकर जवान हो गए और बड़े आलिम बन गए।

फ़र्रुख़ जब लड़ाई पर जा रहे थे, तो बीवी को ३० हज़ार अशर्फ़ियां दे गये थे, जो उन्होंने बेटे के पढ़ने-पढ़ाने पर ख़र्च कर दीं। २७ साल बाद जब वह घर लौटे तो अशर्फ़ियों के बारे में पूछा तो उन्होंने कहा, "सब दौलत महफ़ूज़ है।"

इमाम रबीआ मस्जिद में हदीस पढ़ाते थे। बीवी ने शौहर से कहा, 'ज़रा मस्जिद तो हो आओ।' फ़र्रुख़ मस्जिद-ए-नबवी में पहुंचे तो देखा कि बेटा हदीस का दर्स दे रहा है और बड़े बड़े आलिम वहां बैठे सुन रहे हैं। वह ख़ुशी से फूले न समाये। घर आकर ख़ूब बीवी की तारीफ़ की कि बेटे को ख़ूब पढ़ाया है और बेटे की भी बड़ी तारीफ़ की और बार-बार अल्लाह का शुक्र अदा किया।

अब बीवी ने पूछा, "बताओ तीस हज़ार अशर्फ़ियां ज़्यादा अच्छी हैं या यह "नेमत?" वह बोले, "इस नेमत के आगे ३० हज़ार अशर्फ़ियों की क्या हक़ीक़त है?" अब बीवी ने कहा, "मैंने वह अशर्फियां इस नेमत को हासिल करने में ख़र्च कर दीं। वह ख़ुश होकर बोले, "ख़ुदा की क़सम तुमने अशर्फ़ियां बरबाद नहीं कीं बल्कि सबसे अच्छे काम में लगा दीं।

शेख़ अब्दुल क़ादिर की माँ

हज़रत शेख़ अब्दुल क़ादिर जीलानी रह० बहुत बड़े सूफ़ी आलिम वली गुज़रे हैं। उनको लोग "बड़े पीर साहब" भी कहते हैं।

शेख़ रह० ने अल्लाह की ख़ुशी के लिए बड़े-बड़े काम किये। आपने बुराइयों को मिटाने के लिए बहुत कोशिश की और समाज को सुधारा। उस वक़्त कुछ ऐसे लोग पैदा हो गये थे जो इस्लाम के बारे में तरह-तरह की ग़लत बातें फैला रहे थे और प्यारे नबी सल्ल० के साथियों (सहाबियों) को बदनाम कर रहे थे। हज़रत शेख़ रह० ने डटकर उन लोगों का मुक़ाबला किया और उनका मुंह बन्द किया।

वह अपने वक़्त के सबसे बड़े आलिम भी थे और वली भी। आपकी तक़रीर बड़ी ज़ोरदार होती थी। अल्लाह के फ़ज़्ल से उनको बड़ी अच्छी मां मिली थीं जो उनको अच्छी अच्छी बातें सिखाती रहती थीं। अल्लाह से डरातीं और लिखने-पढ़ने का शौक़ दिलातीं। उनको ख़ुद पूरा क़ुरआन मजीद ज़ुबानी याद था, काम करती जातीं और क़ुरआन पढ़ती जाती थीं। इस तरह रोज़ाना क़ुरआन ख़त्म हो जाया करता। बचपन ही में क़ुरआन सुनते-सुनते हज़रत शेख़ को बहुत सा क़ुरआन हिफ़्ज़ याद हो गया था।

हज़रत शेख़ रह० जब छोटे थे तो आपके बाप का इन्तिक़ाल हो गया था। आपकी वालिदा ने आपको पाला-पोसा। जब आपके वालिद का इन्तिक़ाल हुआ तो उन्होंने अस्सी दीनार छोड़े थे। आप दो भाई थे। आपकी वालिदा ने दीनारों को दो बराबर हिस्से करके दोनों भाइयों के हिस्से अलग-अलग रख दिये। हज़रत शेख़ रह० को क़सबा जीलान में ही (जो आपका वतन था) पढ़ने के लिए बिठा दिया। जब आप वहां पढ़ चुके तो मां से आगे पढ़ने को कहा।

उस वक़्त बग़दाद इल्म का मरकज़ था, वहां बड़े-बड़े आलिम मौजूद थे। शेख़ रह० ने मां से बग़दाद जाने की ख़्वाहिश ज़ाहिर की। उस वक़्त सफ़र करना इतना आसान न था, जितना आज है। आज कल की तरह रेल, बस वग़ैरह सवारियां न थीं। रास्ते ठीक न थे। जंगलों से होकर जाना पड़ता था, जहां अक्सर डाकू रहते थे और मुसाफ़िरों को लूट लिया करते थे। यह सारे खटके थे, लेकिन शेख़ रह० की मां ने दिल कड़ा करके बेटे को एक काफ़िले के साथ बग़दाद जाने की इजाज़त दे दी। जिस वक़्त बेटे को विदा किया तो उनके हिस्से के चालीस दीनार भी उन के कपड़ों में सी दिये। बेटे को नसीहत की झूठ बोलना बुरी बात है।

काफ़िले को रास्ते में डाकुओं ने घेर लिया और लूटना शुरू कर दिया। एक डाकू ने उनसे पूछा, "लड़के तेरे पास कुछ है।" उन्होंने कहा, "हां है।" लेकिन डाकू ने उनकी तरफ़ से ध्यान हटा लिया और दूसरी तरफ़ चला गया। शायद सोचा हो कि इस बच्चे के पास दो चार आने भर ही हो सकते हैं। एक दूसरे डाकू ने पूछा, "लड़के तेरे पास क्या है।" आपने बे-खटके जवाब दिया "चालीस दीनार।" वह डाकू उनको अपने सरदार के पास ले गया। सरदार ने पूछा। "कितनी रक़म है तुम्हारे पास।" शेख़ रह० ने फिर बता दिया, "चालीस दीनार।"

"कहां हैं?"

"यह देखिये, मेरे कपड़ों में सिले हैं।"

"अच्छा, मगर तुमने यह बताये क्यों?"

"क्यों न बताता?" मेरी मां ने मुझको नसीहत की है कि झूठ न बोलना चाहिए। मैं अपनी मां से जो वायदा कर चुका हूँ, उस को कैसे भूल जाता।"

एक बालक की ज़ुबान से यह बातें सुन कर सरदार दंग रह गया। वह सिर नीचा कर के देर तक कुछ सोचता रहा। फिर उसकी आंखों से आंसू फूट पड़े और बोला, "हमारे ऊपर अफ़सोस है कि हमने अपने अल्लाह से इक़रार किया कि उसके हुक्म को मानेंगे, नेक काम करेंगे और बदी से दूर रहेंगे। लेकिन अफ़सोस कि हम बूढ़े हो गये, फिर भी अल्लाह से जो इक़रार किया था उसे भूले रहे। और यह बच्चा है, जिसने अपनी मां से एक इक़रार किया है। उसने ऐसे वक़्त में भी उस इक़रार को याद रखा जबकि डाका पड़ रहा है। मैं तो इस बच्चे से भी गया गुज़रा हूं।"

यह कह कर उसने हुक्म दिया कि लूटा हुआ सारा माल वापिस कर दिया जाए। फिर अपने साथी डाकुओं के साथ अल्लाह से तौबा भी की। इस तरह हज़रत शेख़ रह० की मां की नसीहत की बदौलत सैकड़ों आदमियों का माल भी बचा और डाकुओं को तौबा की तौफ़ीक़ भी मिली।

अल्लाह उन सब से राज़ी हो!

सैयद अहमद शहीद की मां

सैयद अहमद शहीद (रह०) हमारे देश में एक मशहूर बुज़ुर्ग गुज़रे हैं। आप रायबरेली के रहने वाले थे। आपकी अम्मी जान ने आपकी बड़ी अच्छी तर्बियत की थी इसलिए आप बचपन से ही बहुत नेक, बहादुर और निडर थे। इस्लाम से आपको बेहद मुहब्बत थी। दीन का बोल-बाला करने के लिए हमेशा जी-जान से तैयार रहते।

एक दफ़ा की बात है कि अल्लाह की राह में जान की बाज़ी

लगा देने का मौक़ा आ गया। आप अभी छोटे ही थे, लेकिन जाने के लिए बेचैन हो गये। मगर अम्मीजान से पूछना ज़रूरी था। आप इजाज़त लेने अम्मी जान के पास गये। अम्मीजान नमाज़ पढ़ रही थीं। जान के ख़तरे को देखते हुए उनकी नौकरानी ने रोक दिया। जब अम्मीजान नमाज़ पढ़ चुकीं तब उनको पता चला, उन्होंने इजाज़त देनी चाही, लेकिन ख़ादिमा ने फिर रोकना चाहा। तो अम्मीजान को बड़ा बुरा लगा। उन्होंने ख़ादिमा से कहा, "बड़ी बी, मेरा बेटा मुझे तुमसे ज़्यादा प्यारा है, तुमको मुझ से ज़्यादा प्यार तो नहीं हो सकता?"

फिर बेटे से कहा, "बेटा जाओ, मगर बुज़दिली मत दिखाना खूब बहादुरी से लड़ना, अगर मुंह फेर कर भागोगे तो मैं तुम्हारी सूरत न देखूंगी।"

यह अम्मी जान की ही तर्बियत का असर था कि बाद में भी आपने बड़े-बड़े काम किये। अल्लाह के दीन को ऊंचा करने की अनथक कोशिश की और पीठ दिखाने का तो सवाल ही नहीं। और आख़िर में अल्लाह की राह में शहीद हो गये।

देखा तुमने, अम्मी की अच्छी देख-रेख व तालीम का ही यह नतीजा है कि आज भी हम तुम उनके कारनामों को याद करते हैं और इज़्ज़त के साथ उनका नाम लेते हैं।

सर सैयद की मां

मुस्लिम यूनिवर्सिटी अलीगढ़ का नाम तो तुमने सुना होगा। यह हमारे मुल्क की बहुत बड़ी और मशहूर यूनिवर्सिटी है। इसकी तामीर का सेहरा सर सैयद अहमद रह० के सर है। वह बड़े आलिम और मेहनती आदमी थे।

सर सैयद अभी बच्चे ही थे कि किसी बात पर नाराज़ होकर नौकर को पीट दिया। अम्मीजान को मालूम हुआ तो बहुत बिगड़ीं। और सैयद साहब को घर से निकाल दिया। मारे डर के वह ख़ालाजान के घर जा छुपे। घर जाने की हिम्मत न हुई। दो तीन दिन बाद ख़ता माफ़ कराने के लिए ख़ाला जान को साथ लाये। अम्मीजान ने कहा, "जब तक यह नौकर से माफ़ी नहीं मांग लेगा मैं हरगिज़ माफ़ नहीं करूंगी।" आख़िर में सैयद साहब ने नौकर से माफ़ी मांगी, तब जाकर अम्मीजान ने माफ़ किया और घर में रहने की इजाज़त मिली।

उनकी अम्मीजान नौकरों का बड़ा ख़्याल रखती थीं। एक बार वह बीमार पड़ीं। इत्तिफ़ाक़ की बात है कि जो बीमारी उन को थी वही उनकी ख़ादिमा को हो गयी। दवा बड़ी क़ीमती थी। उन्होंने अपनी सारी दवा ख़ुद न खाकर ख़ादिमा को खिला दी। अल्लाह का करना ऐसा हुआ कि ख़ादिमा भी अच्छी हो गयी और बिना दवा के अम्मीजान भी सेहतमन्द हो गयीं।

अम्मीजान की इन्हीं बातों का असर था कि सर सैयद ने ज़िन्दगी भर किसी नौकर पर सख़्ती नहीं की। बल्कि उनके दुख-दर्द में बराबर के शरीक रहते। उनके साथ सैकड़ों लोगों ने काम किया, मगर कभी किसी को उनसे कोई शिकायत न होती। उन के बरताव की हमेशा सब तारीफ़ ही करते थे।

मौलाना शौकत अली की मां

हमारे मुल्क में एक ऐसी ख़ातून थीं जिनको छोटे-बड़े, हिन्दू-मुसलमान सब "बी अम्मां" कहते थे। बी अम्मां को ज़्यादा ज़माना नहीं गुज़रा। हमारे मुल्क की दो मशहूर हस्तियों मौलाना मुहम्मद अली व मौलाना शौकत अली की मां को "बी अम्मां" कहते थे। बी अम्मां में कुछ ऐसी ख़ूबियां थीं जो औरतों में तो क्या मर्दों में भी कम ही मिलती हैं। हम उन्हीं बी अम्मां का ज़िक्र कर रहे हैं।

'बी अम्मां' रामपुर की रहने वाली थीं। १८५७ ई० में जब हिन्दुस्तान वालों ने अंग्रेज़ों से अपना मुल्क आज़ाद कराने के लिए पहली लड़ाई लड़ी उस वक़्त बी अम्मां सिर्फ़ ५ साल की थीं। वे ख़ुद ज़्यादा पढ़ी लिखी न थीं, मगर उनकी सूझ-बूझ और आदतें बड़ी अच्छी थीं। अल्लाह और अल्लाह के रसूल से उन को बड़ी मुहब्बत थी। वह इस्लाम पर जान निछावर करने के लिए हर वक़्त तैयार रहती थीं। जिस बात को दीन के ख़िलाफ़ पातीं उसको कभी न करतीं। बड़ों-बुज़ुर्गों की बहुत इज़्ज़त करतीं। और सब को अच्छी-अच्छी नसीहतें करतीं।

बी अम्मां के चार बेटे थे। नवाज़िश अली, ज़ुलफ़िक़ार अली, शौकत अली और मुहम्मद अली। यह चारों अभी छोटे ही थे कि उनके बाप का इन्तिक़ाल हो गया। नवाज़िश अली भी कम उम्र में ही चल बसे। बाक़ी तीनों बेटे बड़े हुए। इनमें से दो ने बड़ा नाम कमाया। बी अम्मां ने बच्चों की परवरिश बड़े अच्छे ढंग से की। सब से छोटे बेटे मौलाना मुहम्मद अली "जौहर" तो ऐसे क़ाबिल

हुए कि दुनिया उनकी क़ाबलियत का लोहा मानती थी। इस सिलसिले में एक दिलचस्प और नसीहत वाली बात सुनिए।

एक साहब ने मौलाना मुहम्मद अली की तारीफ़ बी अम्मां के सामने करते हुए कहा, "यह आपकी मेहनत और देख भाल का ही फल है कि मुहम्मद अली इतने क़ाबिल बने।" यह सुन कर बी अम्मां ने कहा, "नहीं यह सब तो अल्लाह का फ़ज़्ल है। वह जिस को चाहे इज़्ज़त दे और जिसे चाहे ज़िल्लत दे।"

जब नवाज़िश अली का इन्तिक़ाल हुआ तो लोग बी अम्मां को पुरसा देने आये तो आप ख़ुद लोगों को नसीहत करने लगीं कि अल्लाह की रज़ा पर सब को राज़ी रहना चाहिए। अल्लाह को सारा इख़्तियार है। हमारे पास जो कुछ है सब उसी का दिया हुआ है। उसने हमें जो कुछ दिया है, जब चाहे ले सकता है। मौत और ज़िन्दगी सब उसी के हाथ में है।

बी अम्मां हज करने गयीं तो वहां काबे का ग़िलाफ़ पकड़ कर यह दुआ की, "ऐ मेरे रब ! तूने अपने फ़ज़्ल से बच्चों को बड़ा किया, अब इतनी दुआ है कि इनको सच्चा मुसलमान बना दे।"

अल्लाह के फ़ज़्ल से मौलाना शौकत अली 'गौहर' और मौलाना मुहम्मद अली 'जौहर' ऐसे पक्के और सच्चे मुसलमान बने कि वह ख़ुदा के सिवा किसी से नहीं डरते थे। उस वक़्त हमारे मुल्क में अंग्रेज़ों का राज था। दोनों भाई अंग्रेज़ों से उम्र भर लड़ते रहे। अंग्रेज़ उनको पकड़ कर क़ैद कर देते तो बी अम्मां को जोश आ जाता। वह जेल जाकर बेटों से कहतीं, "बेटो! इस्लाम पर मज़बूती से जमे रहना। अगर इस राह में मौत भी आ जाये तो

परवाह न करना।"

बी अम्मां और मौलाना शौकत अली व मुहम्मद अली के बारे में उस समय दो गीत किसी शायर ने लिखे। दोनों गीत बच्चे बच्चे की ज़ुबान पर थे। एक तो यह था–

बोली अम्मां मुहम्मद अली की
जान बेटे ख़िलाफ़त पे दे दे।

दूसरा गीत यह था–

कह रहे हैं कराची के क़ैदी
हम तो जाते हैं, दो-दो बरस को।

बी अम्मां के ही ज़माने में लोगों ने अंग्रेज़ों की तरह रहना सहना शुरू कर दिया था। ऐसे लोगों से बी अम्मां कहतीं, "इन फ़िरंगियों का तरीक़ा छोड़ दो, अपने बुज़ुर्गों के तरीक़े पर रहो। इन फ़िरंगियों की नौकरी मत करो, उनसे इनाम मत लो, यह लोग बड़े मक्कार और धोखेबाज़ हैं।"

यह थीं बी अम्मां, हमारे मुल्क के दो बड़े लीडरों मौलाना मुहम्मद अली 'जौहर' और मौलाना शौकत अली 'गौहर' की मां। अल्लाह उन पर अपनी रहमत नाज़िल फ़रमाये।

मौलाना इलियास की मां

मां की अच्छी तर्बियत और नेक तमन्नाओं का हम पर कितना असर पड़ता है, उसे देखने के लिए मौलाना इलियास रह० की ज़िन्दगी देखो।

तुमने उनका नाम ज़रूर सुना होगा। आप बड़े अल्लाह वाले

बुज़ुर्ग गुज़रे हैं। उनको गुज़रे ज़्यादा ज़माना नहीं हुआ है। हमने ख़ुद उनको देखा है, और उनकी दुआ ली है।

आपको दीन फैलाने की बड़ी धुन थी। हमेशा इसी कोशिश में रहते थे कि अल्लाह के बन्दे अल्लाह के दीन को जानें और सच्चे व पक्के मुसलमान बन जायें। दीन के लिए उनकी तड़प और लगन देख कर सहाबा की याद ताज़ा हो जाती थी।

मौलाना इलियास को आम तौर से लोग हज़रत जी या बड़े हज़रत जी कहते थे, उन्होंने भी ऐसी मां की गोद में परवरिश पाई थी जो बड़ी नेक और अल्लाह वाली बीवी थीं। उनके पास दीन का बड़ा इल्म था। क़ुरआन पाक की तो वह हाफ़िज़ थीं। और ऐसा अच्छा याद था कि रमज़ान में पूरा क़ुरआन ख़त्म करके दस पारे और पढ़ लिया करती थीं।

नमाज़ भी बड़ा दिल लगाकर पढ़ा करती थीं। पाबन्दी से क़ुरआन की तिलावत करतीं, और क्योंकि अरबी ख़ूब जानती थीं, इसलिए क़ुरआन का मतलब भी ख़ूब समझती थीं। वह नफ़्ल नमाज़ रोज़े और तस्बीह वग़ैरह का भी पाबन्दी से अहतमाम करतीं। उनको सहाबा और बुज़ुर्गों के हालात भी ख़ूब याद थे। वह अपने बेटे को उन बुज़ुर्गों के हालात सुनाया करती थीं। उनकी दिली तमन्ना थी कि उनके बेटे में भी वैसी ही ख़ूबियां पैदा हों।

अम्मीजान की कोशिश का नतीजा यह हुआ कि मौलाना इलियास में उन बुज़ुर्गों की बहुत सी ख़ूबियां पैदा हो गयीं और बड़े होकर उन्होंने ख़ूब दीन फैलाया।

अल्लामा इक़बाल की मां

अल्लामा इक़बाल की कई नज़्में तो तुमने जरूर पढ़ी होंगी। "सारे जहां से अच्छा हिन्दोस्तां हमारा" और "लब पे आती है दुआ बन के तमन्ना मेरी' उन्हीं के लिखे हुए नग़में हैं।

अल्लामा इक़बाल हमारे बहुत ही अच्छे शायर गुज़रे हैं। आप की शायरी बड़ी असर वाली थी। अल्लाह और अल्लाह के रसूल से आपको बेहद मुहब्बत थी। वह सब का भला चाहते थे। मुसलमानों के लिए उनके दिल में बड़ा दर्द था। वह इस्लाम और मुसलमानों का सर बुलन्द देखना चाहते थे। वह हमेशा इसी बारे में सोचा करते, और अच्छी-अच्छी नज़्में लिख कर दिलों को गरमाते रहते थे। उनकी नज़्में पढ़ने से अच्छा बनने और इस्लाम का बोल बाला करने का शौक़ पैदा होता है।

अल्लामा इक़बाल रह० की अम्मीजान बड़ी समझदार और नेक औरत थीं। वह अपने बेटे की बड़ी अच्छी तर्बियत करतीं। सब माओं की तरह उनकी ख़्वाहिश भी यही थी कि उनका बेटा सबसे बढ़ चढ़ कर हो और ख़ूब इज़्ज़त पाये। उन्होंने शुरू से ही इसके लिए पूरी-पूरी कोशिश की।

अल्लामा इक़बाल के अब्बा मियां की कमाई पाक-साफ़ न थी। उस में कुछ शक था। उन की अम्मीजान उस कमाई को पूरी तरह हलाल नहीं समझती थीं। इसलिए अपने शौहर से उस कारोबार को छोड़ कोई दूसरा हलाल कारोबार करने के लिए बराबर कहती रहतीं। लेकिन अभी कोई दूसरा इन्तेज़ाम न हो पाया था कि अल्लामा इक़बाल की पैदाइश हुई। अब उनको दूध

पिलाने का सवाल था। अम्मीजान को यह किसी तरह पसन्द न था कि बच्चे को अपना दूध पिलाकर ऐसी रोज़ी से पालें जो उनके नज़दीक पूरे तौर पर पाक न थी। वह जानती थीं कि ऐसी रोज़ी पर पल कर बच्चे में हरगिज़ वैसी ख़ूबियां पैदा नहीं हो सकतीं जो वह अपने बेटे में देखना चाहती थीं।

अब क्या करें? आख़िर एक तरकीब समझ में आई। उन्होंने अपना कुछ ज़ेवर बेच कर एक बकरी ख़रीद ली। उनके नज़दीक उनका ज़ेवर हलाल कमाई का था। उन्होंने अल्लामा इक़बाल को उसी बकरी का दूध पिलाना शुरू किया। आख़िर उनके शौहर ने चन्द महीनों की दौड़-धूप के बाद जब दूसरा कारोबार कर लिया तो वह बच्चे इक़बाल को अपना दूध भी पिलाने लगीं।

शायद अम्मीजान की इसी एहतियात का असर है कि उनकी गोद में पलने वाला बच्चा इतना दर्दमन्द दिल रखने वाला हुआ और उसकी शायरी का दिलों पर इतना असर हुआ।

□